भारत में बैंकों का कारपोरेट संचालन: श्रेष्ठ उत्पादकता की खोज में *

दुव्वुरी सुब्बाराव

लगातार तीन वर्षों से फिक्की और आइबीए के इस संयुक्त सम्मेलन को संबोधित करने का सौभाग्य मुझे मिलता रहा है । मैं जानता हूँ कि कारपोरेट और बैंक दोनों ही इस सम्मेलन को बहुत महत्व देते हैं और रिज़र्व बैंक भी इसे उतना ही महत्व प्रदान करता है । फिक्की और आइबीए का संयुक्त मंच रिज़र्व बैंक में हमारे लिए वर्तमान प्रासंगिकता वाले विषयों पर अर्थव्यवस्था के दो खंडों - कारपोरेट और बैंक - जिनकी महत्वपूर्ण भूमिका और उत्तरदायित्व वृद्धि और विकास को प्रेरित करने में होती है, के साथ विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्लैटफार्म है ।

भारतीय बैंकिंग - उत्पादकता उत्कर्ष

2. सम्मेलन की विषय-वस्तु - भारतीय बैंकिंग - उत्पादकता उत्कर्ष, चिरस्थायी प्रासंगिकता रखती है लेकिन इस समय यह अधिक प्रासंगिक है क्योंकि आगे बढ़ते हुए वृद्धिशील वृद्धि अधिकाधिक उत्पादकता-वृद्धि पर निर्भर करेगी । भारत ने संकट-पूर्व के वर्षों में उल्लेखनीय वृद्धि तीव्रता देखी थी; इसमें जिन अनेक कारकों ने योगदान किया था, उन्हें स्वीकार किया गया है । लेकिन जैसाकि मैं पहले कह चुका हूँ, उस वृद्धि-निष्पादन के एक ऐसे प्रेरक को, जिसे स्वीकार नहीं किया गया है, वह है वाणिज्यिक बैंकिंग क्षेत्र की अगुवाई में वित्तीय मध्यस्थता की प्रमात्रा और गुणवत्ता में सुधार किया जाना । हम उस उपलब्धि को आधार बनाना चाहते हैं और उत्पादकता में सुधार ऐसा करने के लिए कहीं अधिक महत्वपूर्ण साधन होता है ।

3. अगले दो दिनों तक आप बैंकिंग में उत्पादकता में सुधार की चुनौतियों के बारे में चिंतन करेंगे । मै इसमें अपना योगदान किस प्रकार कर सकता हूँ ? मैं कुछ मुद्दों पर चर्चा करना चाहूँगा जिन पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है लेकिन यह रिज़र्व बैंक के लिए स्पष्टतः तुलनात्मक फायदे वाला नहीं है । इसके बदले, मैंने निश्चय किया है कि मैं केवल एक विषय पर अपना ध्यान केंद्रित करूँगा : भारत में बैंकों का कारपोरेट अभिशासन । यह विकल्प एक से अधिक कारकों से प्रेरित है । यह सम्मेलन संयुक्त रूप से फिक्की, जो कारपोरेटों के हितों को देखता है और आइबीए, जो बैंकों के हितों को देखता है, द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित किया गया है । मैंने केवल रिज़र्व बैंक के हित के क्षेत्र 'अभिशासन' को कारपोरेटों और बैंकों के बीच शामिल किया है ताकि इस विषय में हम सभी के सामूहिक हित शामिल हों । साथ ही, महत्वपूर्ण रूप से मैं यह मानता हूँ कि भारतीय बैंकों का अधिक कारगर और ज्ञानयुक्त कारपोरेट संचालन बैंकिंग उत्पादकता में सुधार के लिए महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करेगा।

कारपोरेट संचालन क्यों महत्वपूर्ण है ?

4. बैंकों के कारपोरेट संचालन पर विशेष रूप से चर्चा करने के पहले आइए हम केवल संदर्भ के लिए यह स्मरण करें कि सामान्य रूप से कारपोरेट संचालन क्यों महत्वपूर्ण है । अपने सर्वाधिक बुनियादी स्तर पर कारपोरेट संचालन स्वामित्व और प्रबंधन को अलग किये जाने से उत्पन्न मुद्दों पर कार्रवाई करने के लिए 'खेल के नियम' तय करता है। अनुभवमूलक साक्ष्य दर्शाता है कि उत्तम संचालन प्रथाओं वाले व्यवसाय अधिक लाभ, इक्विटी पर उच्च प्रतिलाभ और अधिक लाभांश-आय देते हैं । महत्वपूर्ण रूप से, उत्तम कारपोरेट संचालन कुछ ऐसे मृदु क्षेत्रों, यथा कर्मचारी अभिप्रेरण, कार्य-संस्कृति, कारपोरेट मूल्य प्रणाली और कारपोरेट छवि में भी दिखाई पड़ता है । विलोमतः, उच्च प्रोफाइल वाली कंपनियों यथा, बीसीसीआइ, एनरॉन, वर्ल्डकॉम और परमलाट की विफलता उस नुकसान का स्पष्ट सबक है जो घटिया कारपोरेट संचालन के कारण होता है ।

5. यहाँ अपने देश में हमने अभूतपूर्व आयाम वाला एक स्कैंडल सत्यम कंप्यूटर्स में देखा जहाँ कंपनी के सीइओ ने यह स्वीकार किया कि उन्होंने 7000 करोड़ रुपयों की जालसाजी खातों में की है और यह जालसाजी अनेक वर्षों तक की जाती रही है । इस अभिकथित धोखाधड़ी से संबंधित न्यायिक प्रक्रिया के चलते रहने पर भी बड़ा सवाल यह उठता है कि यह किस प्रकार कारपोरेट संचालन की विफलता थी और हम किस प्रकार इस कमी को दूर कर सकते हैं ? हमने बैंकिंग क्षेत्र में घटिया संचालन का उदाहरण देखा है - फोरेक्स लेनदेन में मानकों को नहीं अपनाया जाना और धन-प्रबंध योजनाओं में धोखाधड़ी - जो हमें यह स्मरण दिलाता है कि हमें कारपोरेट

* 23 अगस्त 2011 को मुम्बई में 'वैश्विक बैंकिंग:बदलते प्रतिमान' विषय पर फिक्की-आइबीए सम्मेलन में डॉ. डी.सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का उद्घाटन भाषण

संचालन के प्रत्येक क्षेत्र में उत्तम प्रथाओं को अपनाने के लिए कठोर परिश्रम करना होगा ।

बैंकों का कारपोरेट संचालन किस प्रकार भिन्न है ?

6. बैंक अन्य कारपोरेटों से महत्वपूर्ण संदर्भों में भिन्न होते हैं और यह बैंकों के कारपोरेट संचालन को न केवल भिन्न बना देता है बल्कि अधिक महत्वपूर्ण भी बना देता है । बैंक अर्थव्यवस्था की गति बढ़ाने में सहायक होते हैं, वे मौद्रिक नीति के संचरण के माध्यम होते हैं और अर्थव्यवस्था की भुगतान और निपटान प्रणाली का गठन करते हैं । अपने व्यवसाय के स्वरूप के लिहाज से बैंक अधिक नियंत्रित होते हैं । वे बड़ी मात्रा में असंपार्श्वीकृत सार्वजिनक निधियाँ न्यासी की क्षमता में स्वीकार करते हैं और उन निधियों को ऋण-सृजन के माध्यम से पुनः व्यवसाय में लगा देते हैं । पणधारियों के समूह में बड़े एवं बिखरे आधार वाले जमाकर्ताओं की उपस्थिति बैंकों को अन्य कारपोरेटों से अलग कर देती है ।

7. बैंक विविध, जटिल और अक्सर अपारदर्शी रूप में एक दूसरे से संबद्ध होते हैं जो उनकी 'संसर्ग' क्षमता को रेखांकित करता है । यदि कोई कारपोरेट विफल होता है तो इसकी विफलता का असर केवल पणधारियों पर होता है । यदि कोई बैंक विफल होता है तो इसकी विफलता का प्रभाव तेजी से अन्य बैंकों पर भी पड़ सकता है जिसका गंभीर परिणाम पूरी वित्तीय प्रणाली और समष्टि-अर्थव्यवस्था के लिए हो सकता है ।

8. सभी आर्थिक एजेंटों का व्यवहार अनुचक्रीय ढंग का होता है और बैंक इसके अपवाद नहीं होते, जैसाकि चक प्रिंस, सिटी ग्रुप के पूर्व सीइओ ने उचित ही कहा था । उन्होंने कहा था कि कोई व्यक्ति तभी तक नाचता है जब तक संगीत की धुन बजती रहे । बैंक इस दृष्टि से भिन्न होते हैं कि उनका अनुचक्रीय आचरण न केवल संस्था को चोट पहुँचाता है बल्कि व्यापक अर्थव्यवस्था को इससे नुकसान उठाना पड़ता है । संकट से सीखे गये अनेक सबकों में से एक सबक यह है कि वित्तीय बाजार स्वयं सुधार करने वाले नहीं होते हैं । यह अंशतः इसलिए होता है कि वित्तीय अस्थिरता के संकेतों का तत्काल पता लगाना कठिन होता है । इसके अतिरिक्त बैंक बाजार के कुछ अनुशासनिक दबाव से बच जाते हैं क्योंकि उनके तुलनपत्र विशिष्ट रूप से अपारदर्शी होते हैं ।

9. आधुनिक वित्तीय प्रणाली और समष्टि-अर्थव्यवस्था में बैंकों के केंद्रीय स्थान को देखते हुए प्रणालीगत रूप से बड़े बैंक महत्वपूर्ण हो जाते हैं । इससे नैतिक जोखिम के मुद्दे उभरते हैं, क्योंकि तब सर्वांगी महत्वपूर्ण बैंक पूरी तरह यह जानते हुए अत्यधिक जोखिम उठाने लगते हैं कि उनका फायदा होगा और यदि जोखिम उठाने पर उनका नुकसान होता है तो सरकार या केंद्रीय बैंक उन्हें उबार लेंगे और इसके द्वारा हानियों का समाजीकरण किया जा सकता है । पिछले तीन वर्षों से अपनी पीढ़ी के सबसे बड़े वित्तीय संकट का अनुभव करने के बाद हम सभी यह जानते हैं कि ये जोखिमें और वित्तीय प्रणाली की असुरक्षा पाठ्य-पुस्तक की अवधारणा नहीं हैं ये सभी वास्तविक जगत में हो सकने वाली घटनाएँ हैं ।

10. यदि बैंक अनेक तरह से 'विशेष' होते हैं, जैसाकि मैंने ऊपर इंगित किया है, तो यह समझने की बात है कि बैंकों के कारपोरेट संचालन को भी विशेष होना पड़ेगा जिसमें ये विशेष लक्षण प्रतिबिंबित होंगे । विशेष कर, बैंकों के निदेशक मंडल और वरिषठ प्रबंधतंत्र को जमाकर्ताओं के हितों के प्रति संवेदनशील होना होगा, अत्यधिक जोखिम-ग्रहण के विनाशक परिणामों से अवगत होना होगा, चेतावनी संकेतों के प्रति सावधान रहना होगा और इतना बुद्धिमान होना होगा कि वे अपने अविवेकी उल्लास को थाम सकें । संकट-पश्चात् की अवधि में एक बहस चल रही है कि किस सीमा तक कारपोरेट संचालन की विफलता इस संकट के लिए जिम्मेवार रही है । कारपोरेट संचालन की विफलता के ऐसे जबरदस्त साक्ष्य को देखते हुए यह बहस करना निरर्थक है । महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि बैंकों के निदेशक मंडल के निदेशक यह नहीं जानते कि बैंकों में क्या चल रहा है तो उन्हें स्वयं से यह पूछना चाहिए कि क्या वे निदेशक होने के योग्य हैं । यदि वे जानते थे और उसे रोका नहीं तो वे लापरवाही और धोखाधड़ी के सह-अपराधी थे ।

11. वास्तव में संकट-पश्चात् अवधि में बैंकों के कारपोरेट संचालन पर आया फैसला बैंकों के काफी विरूद्ध जाता है । अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान जो कि प्रमुख अंतरराष्ट्रीय बैंकों का संघ है, ने वर्ष 2008 में बैंकों के निदेशक मंडलों के कार्यसंपादन का परीक्षण करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि 'घटनाओं ने कुछ निदेशक मंडलों द्वारा उचित रूप से वरिष्ठ प्रबंधतंत्र के कार्यों का निरीक्षण करने और व्यवसाय को स्वयं समझने तथा उस पर निगरानी रखने की उनकी योग्यता पर सवाल खड़े किये हैं ।' ओइसीडी की एक रिपोर्ट के अनुसार लगभग सभी 11 प्रमुख बैंक, जिनकी समीक्षा वरिष्ठ पर्यवेक्षक दल (वित्तीय स्थिरता बोर्ड-एफएसबी के तत्वावधान में गठित वरिष्ठ पर्यवेक्षकों का एक अनौपचारित दल) द्वारा वर्ष 2008 में की गयी थी, बाजार-दबाव की गंभीरता और स्वरूप का पूरी तरह अनुमान लगाने में विफल रहे । सकारात्मक दृष्टि से कुछ ऐसे प्रारंभिक साक्ष्य हैं, जो यह बताते हैं कि जिन बैंकों में सुदृढ़ कारपोरेट संचालन तंत्र काम कर रहा था, उन पर संकट का प्रभाव कम हुआ, उनकी लाभप्रदता वर्ष 2008 में अधिक थी और उन्होंने बाजार की हलचल के ठीक बाद शेयरों पर उच्चतर प्रतिलाभ दिया।

12. इस संदर्भ में एक प्रासंगिक प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या उभरती अर्थव्यवस्थाओं में कारपोरेट संचालन का कोई अतिरिक्त आयाम

होता है । वास्तव में ऐसा होता है, और मैं केवल दो महत्वपूर्ण उदाहरण देना चाहता हूँ । पहला, उभरती अर्थव्यवस्थाओं में बैंक केवल वित्तीय मध्यस्थता के एजेंट नहीं होते बल्कि उससे कुछ अधिक होते हैं; वे वित्तीय क्षेत्र के विकास के अग्रणी होने का दायित्व निभाते हैं और सरकार की सामाजिक कार्यसूची के प्रेरक तत्व होते हैं । दूसरा, उभरती अर्थव्यवस्थाओं में संस्थागत संरचना जो विनियामक और विनियमिती के बीच और सभी विनियामकों की सीमा को परिभाषित करती है, वह अभी भी विकसित हो रही है । उन तनावों का प्रबंध करना जो इन कारकों से उत्पन्न होते हैं, उभरती अर्थव्यवस्थाओं में बैंकों के कारपोरेट संचालन को और भी चुनौतीपूर्ण बना देता है ।

बैंकों का विनियमन और कारपोरेट अभिशासन

13. बैंकिंग उद्योग में कारपोरेट संचालन के सिद्धांतों में विनियमन की ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण भूमिका रही है । तथापि, इस आधार पर यह विश्वास करना कि उत्तम विनियमन खराब कारपोरेट संचालन का समंजन कर सकता है, स्पष्ट रूप से गलत होगा । विनियमन तो कारपोरेट संचालन का पूरक हो सकता है लेकिन यह इसका प्रतिस्थानी नहीं हो सकता ।

14. इस संकट ने सुधारों की एक शृंखला को प्रेरित किया है ताकि इसके द्वारा प्रकट की गयी कुछ ज्ञात जोखिमों का शमन किया जा सके । कुछ देशों ने बड़े संरचनात्मक बदलाव को कार्यान्वित किया है ताकि उनकी वित्तीय संस्थाओं में सुधार हो, उनकी प्रबंधन प्रणाली की सुदृढ़ता सुनिश्चित हो और उनके परिचालन अधिक पारदर्शी बनें । इसमें सर्वाधिक उल्लेखनीय रहा है अमेरिका का डॉड-फ्रैंक ऐक्ट, जो अन्य बातों के साथ-साथ, निदेशक मंडल तथा शीर्ष प्रबंध-तंत्र के पदों और उनकी क्षतिपूर्ति के संबंध में अधिक पारदर्शिता का लक्ष्य रखता है।

15. जबकि बैंकों में सुदृढ़ कारपोरेट मानकों को सुनिश्चित करने में विनियम की भूमिका होती है, इस बात को समझना आवश्यक है कि कारगर विनियम आवश्यक तो होता है लेकिन यह उत्तम कारपोरेट संचालन के लिए पर्याप्त शर्त नहीं होता है । विनियमों द्वारा सिद्धांत स्थिर किये जा सकते हैं और नियम बनाए जा सकते हैं लेकिन इन सिद्धांतों को और नियमों को सही रूप में क्रियान्वित करने की प्रेरणा संगठनात्मक संस्कृति का विषय होता है । यदि बैंक विनियम को केवल अनुपालन-कार्य के रूप में देखते हैं, न कि संस्कृति निर्माण के उद्देश्य से देखते हैं तो कारपोरेट संचालन को आगे बढ़ाने की विनियम की योग्यता काफी प्रतिबंधित हो जाती है । आइए, हम बैंक लेखा-परीक्षा का उदाहरण लें । बाह्य लेखापरीक्षकों की प्रभावपूर्णता एक ठोस कारपोरेट संचालन ढाँचे के लिए एक महत्वपूर्ण घटक होता है । जब तक लेखापरीक्षा हो रही हो तब तक विनियामक अपेक्षाओं का पालन किया जाता है । लेकिन क्या लेखापरीक्षा प्रभावी होती है ? क्या लेखापरीक्षा में सभी प्रकार की धोखाधड़ियों, उल्लंघनों और गलतियों को बताया गया है ? क्या लेखापरीक्षा के परिणामस्वरूप दीर्घकालिक और प्रणालीगत सुधार की कार्रवाई की गयी है ? यदि इसका उत्तर 'नहीं' में हो तो बैंकों का कारपोरेट संचालन दोषपूर्ण है या प्रभावी नहीं है ।

भारत में बैंकों के कारपोरेट संचालन का विकास

16. अब मैं भारत में बैंकों के कारपोरेट संचालन के विकास का एक संक्षिप्त खाका प्रस्तुत करता हूँ । सुधार-पूर्व अवधि में बहुत कम विनियामक दिशा-निर्देश होते थे जिनमें कारपोरेट संचालन को शामिल किया जाता था । इससे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और कुछ निजी बैंकों की प्रधानता का पता चलता है । यह दृश्य वर्ष 1991 में आये सुधार के बाद बदला जब सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने सरकार की शेयरधारिता में कमी को देखा और बड़ी संख्या में निजी क्षेत्र के बैंक सामने आये । इन परिवर्तनों ने कारपोरेट संचालन के सुधार-पश्चात् मानकों को किस प्रकार आकार दिया ?

17. पहला, नये निजी-क्षेत्र के बैंकों के प्रवेश से आयी प्रतिस्पर्धा और बाजार में उनके बढ़ते हिस्से ने बैंकों को सभी स्तर पर ग्राहक सेवा की ओर अधिक ध्यान देने के लिए बाध्य किया । चूँकि अब ग्राहक स्वयं अपने हिसाब से कार्य कर सकते थे, अतः ग्राहक सेवा की गुणवत्ता बाजार के हिस्से की रक्षा करने और तब उस हिस्से को आगे बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण वैरिएबल बन गयी।

18. दूसरा, सुधार-पश्चात् अवधि में बैंकिंग के विनियम निर्धारक होने के स्थान पर विवेकपूर्ण बन गये । इसका निहितार्थ था संतुलन में बदलाव जो कि विनियम से बाहर हो कर कारपोरेट संचालन की ओर मुड़ गया । बैंकों को अब अधिक स्वतंत्रता और लचीलापन प्राप्त है कि वे अपनी स्वयं की व्यवसाय-योजना और कार्यान्वयन नीतियाँ बनायें जो उनके तुलनात्मक फायदे से संगति रखता हो । बैंकों के निदेशक मंडल को इसे देखने की प्राथमिक जिम्मेवारी ग्रहण करनी पड़ी । इससे यह आवश्यक हुआ कि निदेशक अधिक ज्ञानसंपन्न और सजग हों तथा विविध प्रकार की रणनीतियों एवं नीतिगत विकल्पों पर सुविज्ञ निर्णय का भी प्रयोग कर सकें।

19. तीसरा, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से संबंधित सुधार के दो उपायों - संस्थागत और खुदरा शेयरधारकों का प्रवेश और शेयर बाजार में

सूचीबद्धता - से उनके कारपोरेट संचालन में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। प्राइवेट शेयरधारकों का प्रतिनिधित्व करने वाले निदेशकों ने निदेशक मंडल की बैठकों में नये परिप्रेक्ष्यों को उपस्थित किया और प्राइवेट शेयरधारकों के हितों ने रणनीतिक निर्णयों को प्रभावित करना शुरूकिया । इसके अतिरिक्त, सेबी की सूचीबद्धता संबंधी अपेक्षाओं ने प्रकटीकरण और पारदर्शिता के मानकों को बढ़ाया।

20. चौथा, बढ़ती प्रतिस्पर्धा का सामना करने में समर्थ बनाने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को अधिक स्वायत्तता प्रदान की गयी । अब वे वास्तविक रूप में मानव-संसाधन के समस्त मुद्दों के संबंध में निर्णय ले सकते थे और प्रचलित विनियम के अधीन रहते हुए व्यवसाय का अभिग्रहण कर सकते थे, अलाभकर शाखाओं को बंद या उनका विलय कर सकते थे, समुद्रपार कार्यालय खोल सकते थे, अनुषंगी इकाइयों की स्थापना कर सकते थे, नये व्यवसाय या मौजूदा व्यवसाय की व्यवस्था कर सकते थे और यह सब करने के लिए उन्हें सरकार का पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं थी । इन सभी का मतलब यह था कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निदेशक मंडल को अधिक दायित्व के साथ बृहत्तर स्वायत्तता दी गयी थी।

21. अंत में, संरचनात्मक सुधारों की श्रृंखला ने बैंकों में कारपोरेट संचालन की प्रोफाइल और महत्व को बढ़ा दिया । 'संरचनात्मक' सुधार के उपायों में निदेशक मंडल में स्वतंत्र निदेशकों का अनुपात बढ़ाया जाना; विविध कौशल और विशेषज्ञता रखने वाले लोगों को निदेशक मंडल के सदस्य के रूप में रखना; जोखिम-प्रबंध, क्षतिपूर्ति, निवेशक शिकायत निवारण और निदेशकों के मनोनयन जैसे प्रमुख कार्यों के लिए बोर्ड-समितियों का गठन किया जाना शामिल था। संरचनात्मक सुधारों को निदेशक मंडल की भूमिका और दायित्व, निदेशकों के लिए प्रशिक्षण की सुविधा, और सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप से निदेशकों के लिए 'उपयुक्त और उचित' मानदंडों को लागू किये जाने से संबंधित गांगुली समिति की सिफारिशों को कार्यान्वित करते हुए आगे बढ़ाया गया।

भारत में बैंकों के कारपोरेट संचालनसे संबंधित कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे

22. अब मैं बैंकों के कारपोरेट संचालन के कुछ ऐसे मुद्दों पर चर्चा करूँगा जिन पर सामूहिक रूप से ध्यान दिया जाना है । ऐसा में निम्नलिखित पाँच शीर्षकों में करूँगा।

बैंक-स्वामित्व

23. पहले मुद्दे का संबंध स्वामित्व से है । शेयरधारकों और जमाकर्ताओं के हितों के बीच कुछ अपसरण होता है । शेयरधारक चाहते है कि अधिक जोखिम ले कर उनके लाभ में बढ़ोतरी की जाये; जमाकर्ता अपनी जमाराशि की सुरक्षा को तरजीह देते हैं और इसीलिए वे कम जोखिम पसंद करते हैं । इसके साथ ही जमाकर्ता बैंकों के संचालन में कम अधिकार रखते हैं, जबकि शेयरधारकों का अधिकार अधिक घोषित होता है । शेयरधारकों के समूह के भीतर प्रवर्तक शेयरधारकों द्वारा प्रयुक्त नियंत्रण की सीमा भी कारपोरेट संचालनकी प्रभावपूर्णता का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व होता है । जैसाकि हाल के कुछ दृष्टांतों में प्रदर्शित हुआ है, प्रवर्तकों का अत्यधिक प्रभाव निदेशक मंडल को प्रवर्तकों का प्रवक्ता बना देता है और ऐसा होना अन्य सभी पणधारियों के हितों के प्रतिकूल होगा ।

24. स्वामित्व के मुद्दे को देखने का एक अन्य तरीका सार्वजनिक बनाम निजी स्वामित्व के संदर्भ में है । यदि बैंक सरकार के स्वामित्व में हों तो शेयरधारकों और जमाकर्ताओं के बीच हितों के टकराव का शमन हो जाता है । बैंकों पर सरकार का स्वामित्व होना वित्तीय प्रणाली में भरोसा भी जगायेगा । दूसरी ओर, एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या कारगर और स्वायत्त कारपोरेट संचालन बैंकों के सरकारी स्वामित्व से अनुरूपता रखता है । यह प्रश्न इसलिए उठता है कि सरकार के स्वामित्व वाले बैंक सरकार के प्रति और जनतांत्रिक संस्थाओं के प्रति जवाबदेह होते हैं । सरकार उनका मूल्यांकन बाजार प्रयुक्त मानदंडों से भिन्न मानदंडों के आधार पर करती है । हम इस दुविधा को किस प्रकार समाप्त कर सकते हैं ? विशेष रूप से, क्या यह संभव होगा कि सीइओ को नियुक्त करने की शक्ति निदेशक मंडल को सौंप दी जाये, लेकिन निदेशक मंडल को बैंक के कार्यसंपादन के लिए सरकार और शेयरधारकों के प्रति जवाबदेह बनाया जाये ?

25. विविधीकृत स्वामित्व और शेयरधारकों की 'उपयुक्त एवं उचित' हैसियत कारपोरेट संचालनके अन्य महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व होते हैं । निजी क्षेत्र के बैंकों के स्वामित्व और संचालनके संबंध में रिज़र्व बैंक के दिशा-निर्देशों में जो फरवरी 2005 में जारी किये गये थे, यह सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखा गया था कि बैंकों का स्वामित्व और नियंत्रण भली-भांति विविधीकृत हो । रिज़र्व बैंक उन बैंको के साथ निरंतर संपर्क करता रहा है जिनका संकेंद्रित स्वामित्व है और उनसे कहता रहा है कि वे समयबद्ध ढंग से निर्धारित सीमाओं का पालन करें । इसी प्रकार, बड़े शेयरधारकों की 'उपयुक्त एवं उचित' हैसियत सुनिश्चित करने के लिए निजी क्षेत्र के बैंकों में शेयरों का अभिग्रहण बैंक की कुल चुकता पूँजी के 5 प्रतशित या अधिक होने पर रिज़र्व बैंक की अभिस्वीकृति अनिवार्य है। यह कहने के बाद इस बात को स्वीकार करना होगा कि 'उपयुक्त एवं उचित' का मूल्यांकन करना विज्ञान से अलग होता है; इसमें काफी

मात्रा में विवेक अपेक्षित होता है । इसके अतिरिक्त 'उपयुक्त एवं उचित' एक बार करने वाला कार्य होता है और इसे तब तक दुहराया नहीं जाता जब तक कोई नयी सूचना प्राप्त नहीं होती है । इन सीमाओं को स्वीकार किया जाना आवश्यक है ।

26. बैंकों के स्वामित्व का एक अन्य मुद्दा जिस पर हमने नये बैंक-लाइसेंस के संबंध में चर्चा-पत्र में प्रकाश डाला था, वह यह था कि क्या कारपोरेटों को बैंकों का प्रवर्तक होने का पात्र बनाया जाना चाहिए । इस संबंध में अंतरराष्ट्रीय अनुभव भिन्न प्रकार का है । इस प्रस्ताव के पक्ष और विपक्ष, दोनों के लिए विश्वासोत्पादक तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं । इसके पक्ष में सबसे मजबूत तर्क यह होता है कि कारपोरेट जहां पूँजी ला सकते हैं, वहीं वे व्यावसायिक अनुभव और प्रबंधकीय क्षमता भी ला सकते हैं । इससे कहीं बड़ी आशंका आत्म-व्यवहार के बारे में होती है कि कारपोरेटों द्वारा बैंक का उपयोग सहज उपलब्ध निधियों के समुच्चय के रूप में किया जायेगा।

27. निस्संदेह, आत्म-व्यवहार के विरुद्ध सांविधिक और विनियामक, दोनों प्रकार के नियंत्रण होते हैं । उदाहरण के लिए, बैंककारी विनियमन अधिनियम अभिव्यक्त रूप से बैंकों को अपने निदेशक मंडल के निदेशकों को और उन प्रतिष्ठानों को जिनसे वे हितबद्ध हों, उधार देने से प्रतिबंधित करता है । विनियमावली निदेशक मंडल के पूर्व अनुमोदन या जानकारी के बिना निदेशकों के रिश्तेदारों को भी उधार देने से प्रतिषिद्ध करती है । ऐसे निदेशक जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी ऋण-प्रस्ताव से हितबद्ध हों, उन्हें अपना ऐसा हित प्रकट करना होता है और प्रस्ताव पर चर्चा में भाग लेने से स्वयं को अलग रखना होता है ।

28. ये निर्धारण काफी अधिक व्यापक हैं, फिर भी इनमें अभी भी अंतराल है । दृष्टांत रूप में, यदि किसी कारपोरेट का हित किसी बैंक में उसके प्रवर्तक या शेयरधारक होने के नाते होता है लेकिन निदेशक मंडल में उसका कोई स्थान नहीं होता है, तब उस कारपोरेट को उधार देने में बैंक पर कोई प्रतिषेध नहीं लगाया जाता है । इससे आत्म-व्यवहार का अवसर उत्पन्न होता है । एक अन्य आशंका जो चर्चा-पत्र पर सार्वजनिक बहस में उठायी गयी थी वह यह थी कि पर्यवेक्षकों के लिए आत्म-व्यवहार को रोक पाना या उसका पता लगा लेना आसान नहीं होगा क्योंकि बैंक संबंधित पार्टी-उधार को जटिल कंपनी संरचना के पीछे या प्रवर्तकों के आपूर्तिकर्ताओं को या उनकी समूह-कंपनियों को उधार देने के माध्यम से छिपा सकते हैं । जैसे-जैसे हम कारपोरेटों को बैंकों का प्रवर्तक बनने की अनुमति देने पर विचार करते हैं, इस बात की आवश्यकता होती है कि इन चिंताओं पर ध्यान देने के लिए संविधि और विनियमों में संशोधन किये जायें।

जवाबदेही, नैतिकता और नैतिक सिद्धांत

29. स्वामित्व और प्रबंधन को अलग किये जाने से हितों का टकराव हो सकता है यदि प्रबंधकों के अभिप्राय, चूक, लापरवाही या अक्षमता के चलते विश्वास-भंग हो । इस पर ध्यान देने के लिए निदेशक मंडल को सभी पणधारियों के प्रति और अधिक जवाबदेह बनाये जाने और उनके कार्य को पारदर्शी बनाये जाने की आवश्यकता होगी । वर्षों से, हमने अपने पारदर्शिता और प्रकटीकरण मानकों को वैश्विक सर्वोत्तम व्यवहारों के संरेखण में स्थापित करने की चेष्टा की है । लेकिन हमें प्रश्न पूछने की आवश्यकता है । क्या स्वतंत्र निदेशकों की आवाज हमेशा स्वतंत्र होती है ? क्या बैंकों के सीइओ निदेशक मंडल की आलोचनाओं का समर्थन करते हैं ? क्या निदेशक मंडल 'समूह सोच' के शिकार होते हैं और स्वतंत्र निर्णय के अपने दायित्व का त्याग कर देते हैं ? यही वह आत्मान्वेषण है जिसके माध्यम से बैंकों के कारपोरेट संचालनमें सुधार लाया जा सकता है।

30. जिस पैमाने पर हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान हमने विफलता देखी थी, वह भी बैंकों में घटिया नैतिक मानकों का परिचायक है । संकट के कारणों के लगभग सभी क्षेत्रों का संबंध इस बात से है कि वित्तीय प्रणाली का परिचालन किस प्रकार किया जाता है । वित्तीय क्षेत्र की शृंखला में सभी सहभागियों का व्यवहार उचित और नैतिक मानकों को अपना कर लाभ प्राप्त करने की अपेक्षा त्वरित लाभ प्राप्त करने के अवसर से अधिक विचलित हुआ । न तो सब-प्राइम उधारकर्ताओं को पर्याप्त रूप से सावधान किया गय कि आस्ति-कीमतों में गिरावट की संभावना है और न ही निवेश-परामर्शकों ने अपने मुवक्किलों को उन जोखिमों के बारे में बताया जो वे एमबीएस और सीडीओ खरीदने में ले रहे थे । ऐसे व्यवहार पर न केवल नियंत्रण नहीं लगाया गया बल्कि उन्हें प्रोत्साहित भी किया गया।

31. यहाँ अपने देश में, हालाँकि हमारा बैंकिंग क्षेत्र अधिकतर इस संकट से बचा रहा, हमें अपनी कमियों और शिथिल प्रथाओं के बारे में आत्म-निरीक्षण करना चाहिए । किस सीमा तक फोरेक्स डेरिवेटिवों की समुचित बिक्री करने में विचलन बैंकों द्वारा किया गया ? क्या तिमाही उपार्जन चक्र पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है जो दीर्घावधि कार्यसंपादन के प्रतिकूल हो ? क्या आक्रामक नीतियाँ अत्यधिक जोखिम लेने की अगुआई करती हैं ? मेरा विश्वास है कि इस प्रकार के मुद्दे अन्य व्यवसायों के अतिरिक्त वित्तीय क्षेत्र के विशेष नैतिक आयाम को रेखांकित करते हैं । बैंकों के निदेशक मंडलों और वित्तीय संस्थाओं को अपने इस दायित्व के प्रति सजग रहना होगा कि वे अपने निजी लाभ के प्रयोजन के लिए वृहत्तर लोकहित को बाधित नहीं करें।

क्षतिपूर्ति

32. संकट-पश्चात् अवधि में बैंकिंग क्षेत्र में क्षतिपूर्ति का मुद्दा उच्च प्रोफाइल वाला रहा है । अब यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है कि उन्नत देशों में बैंकों की क्षतिपूर्ति संबंधी संरचना में अंतर्निहित त्रुटिपूर्ण ढांचे ने संकट को प्रेरित किया । बैंक-कार्यपालकों की निष्पादन-आधारित क्षतिपूर्ति को विशेष रूप से इस आधार पर न्यायसंगत ठहराया जाता है कि बैंकों को प्रतिभासंपन्न लोगों को लेने और रखने की आवश्यकता होती है । पश्च-दृष्टि के लाभ के साथ अब हम यह जानते हैं कि इस तर्क ने उस विकृत प्रोत्साहन की अनदेखी की जो इससे उत्पन्न होता । बैंकों के कार्यपालक अल्पावधि लाभ से प्रेरित हुए, भले ही इसमें उन्हें दीर्घावधि हितों से समझौता करना पड़ा । वित्तीय स्थिरता बोर्ड (एफएसबी) ने अब सिद्धांतों का एक सेट बनाया है जो क्षतिपूर्ति प्रथा पर नियंत्रण रखेगा और बासेल समिति ने इन सिद्धांतों का अनुपालन किये जाने के लिए एक कार्यप्रणाली विकसित की है । प्रस्तावित ढाँचे में परिवर्तनीय वेतन का अनुपात बढ़ाना, इसे दीर्घावधि मूल्य-सृजन से संरेखित करना और आस्थगन और जबरन वापसी खंड जोड़ना शामिल है ताकि कार्यपालक द्वारा करायी जाने वाली भावी हानियों का समंजन हो सके ।

33. अधिकांश अन्य अधिकार-क्षेत्रों की तुलना में रिज़र्व बैंक के पास बैंककारी विनियमन अधिनियम के अनुसार यह अधिकार होता है कि वह बोर्ड-क्षतिपूर्ति का विनियमन कर जिसमें निजी बैंकों के सीइओ का वेतन और परिलब्धियाँ शामिल हैं । निजी क्षेत्र के बैंकों के पूर्णकालिक निदेशकों और सीइओ के लिए क्षतिपूर्ति प्रस्तावों का मूल्यांकन करने में रिज़र्व बैंक प्रासंगिक कारकों यथा, बैंक का कार्य-निष्पादन, समान समूह में क्षतिपूर्ति संरचना, उद्योग में प्रचलित प्रथा और विनियामक चिंता, यदि हो, से निर्देशित होता है । जहाँ तक बोनस का संबंध है, अगस्त 2003 में जारी किये गये रिज़र्व बैंक के दिशा-निर्देशों के अनुसार पूर्णकालिक निदेशकों और सीइओ के संबंध में बोनस की अधिकतम सीमा उनके वेतन के 25 प्रतिशत पर या बैंक के अन्य कर्मचारियों को अदा किये गये बोनस के स्तर पर निश्चित की गयी है ।

34. संकट-पश्चात अवधि में क्षतिपूर्ति संरचना के संबंध में वैश्विक पहल की भावना को प्रतिबिंबित करते हुए हमने यह निश्चय किया कि भारत में भी सुधार किये जाने की आवश्यकता है । तदनुसार, जुलाई 2010 में रिज़र्व बैंक ने 'पूर्णकालिक निदेशकों /मुख्य कार्यपालक अधिकारियों /रिस्क-टेकर्स और नियंत्रण-स्टाफ की क्षतिपूर्ति' के संबंध में प्रारूप दिशा-निर्देश जारी किये । प्रारूप दिशा-निर्देश में यह प्रस्ताव किया गया कि बैंकों में क्षतिपूर्ति-नीति होनी चाहिए, क्षतिपूर्ति संरचना को विवेकपूर्ण जोखिम ग्रहण के साथ संरेखित किया जाना चाहिए और जबरन वापसी तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए । इन दिशा-निर्देशों को प्रारंभ में वर्ष 2011-12 से कार्यान्वित किये जाने का अभिप्राय था लेकिन इस समय-सारणी को आस्थगित रखा गया क्योंकि बासेल समिति जोखिम, कार्यनिष्पादन और पारिश्रमिक के बीच संरेखण के लिए कार्यप्रणालियों को अंतिम रूप दे रही थी । इस बीच, रिज़र्व बैंक ने चुनिंदा बैंकों के संबध में प्रभाव-अध्ययन कराया । प्रारूप दिशा-निर्देशों के संबंध में प्राप्त प्रतिसूचनाओं, प्रभाव-अध्ययन के परिणाम और बासेल समिति द्वारा इस विषय में मई 2011 में जारी किये गये अंतिम निर्धारणों को ध्यान में रख कर रिज़र्व बैंक क्षतिपूर्ति से संबंधित दिशा-निर्देशों को अंतिम रूप दे रहा है । ये दिशा-निर्देश वित्तीय वर्ष 2012-13 से कार्यान्वित किये जाने हैं, और बैंकों को सूचित कर दिया गया है कि वे इस संबंध में प्रारंभिक कार्य शुरू कर दें ।

35. अन्य प्रासंगिक पहलू है निदेशक मंडल में गैर-कार्यपालक निदेशकों की क्षतिपूर्ति का । ऐसा विचार जिसे भारत सरकार के कारपोरेट संचालन स्वैच्छिक दिशा-निर्देश, 2009 में भी स्पष्ट किया गया है, वह यह है कि कंपनियों के पास यह विकल्प होना चाहिए कि वे गैर-कार्यपालक निदेशकों को एक निश्चित संविदागत पारिश्रमिक दें जो लाभ से जुड़ा न हो । बैंकिंग क्षेत्र में गैर-कार्यपालक निदेशकों को सिटिंग फीस के माध्यम से विशिष्ट रूप से क्षतिपूर्ति दी जाती है, सिवाय गैर-कार्यपालक अध्यक्षों के, जिन्हें नियमित पारिश्रमिक दिया जाता है ।

36. प्रश्न यह है कि क्या बैंकों के गैर-कार्यपालक निदेशकों को भी नियमित या निश्चित संविदागत पारिश्रमिक का भुगतान किया जाना चाहिए । संभवतः यह एक उत्तम अवधारणा है, लेकिन व्यवहार में इसे कार्यान्वित करना मुश्किल है । विशेष रूप से, बैंकों में ली गयी जोखिमों के नतीजे लंबे अंतराल के बाद प्रदर्शित होते हैं । जबकि यह संभव है कि कार्यपालकों की क्षतिपूर्ति को जोखिमों से संरेखित किया जाये क्योंकि वे दीर्घकालिक कर्मचारी होते हैं, यह गैर-कार्यपालक निदेशकों के मामले में अधिक समस्यामूलक होता है क्योंकि वे अपेक्षाकृत अल्प अवधि के लिए सेवारत होते हैं और उनकी पदावधि सीमित होती है । इसके अतिरिक्त, पूर्णकालिक कार्यपालक निदेशकों के विपरीत गैर-कार्यपालक निदेशक सामूहिक रूप से निदेशक मंडल और निदेशक मंडल की समितियों के भाग के रूप में कार्य करते हैं जिससे उनके दायित्वों को अलग-अलग विभाजित करना मुश्किल हो जाता है । कार्यान्वयन से संबंधित इन मुद्दों के होने पर भी, हमें इस बात पर बहस करने की आवश्यकता है कि किस प्रकार गैर-कार्यपालक निदेशकों की क्षतिपूर्ति को कारपोरेट संचालन के निष्कर्षों से संरेखित किया जाये।

बैंकों के अध्यक्ष और सीइओ के पदों को विभक्त करना

37. बैंकों के अध्यक्ष और सीइओ के पदों को विभक्त करना एक अन्य मुद्दा है जिसने एक विवादास्पद बहस को जन्म दिया है । रिज़र्व बैंक द्वारा नियुक्त गांगुली समिति ने यह सिफारिश की थी कि बैंक के निदेशक मंडल के अध्यक्ष और सीइओ के पदों को विभक्त किया जाये । इसके पीछे तर्क यह है कि निदेशक मंडल के नेतृत्व को दिन-प्रतिदिन के व्यवसाय-संचालन से पृथक किया जाना बैंक के शीर्ष प्रबंधतंत्र के कार्य पर अधिक ध्यान और दृष्टि प्रदान करने के साथ-साथ आवश्यक जोर भी डालेगा । यह कारगर नियंत्रण और संतुलन भी प्रदान करेगा ।

38. रिज़र्व बैंक ने गांगुली समिति की सिफारिशों को सभी निजी क्षेत्र के बैंकों में वर्ष 2007 से कार्यान्वित कर दिया । अनुभव यह बताता है कि इस व्यवस्था ने भली-भाँति कार्य किया है । वास्तव में गांगुली समिति की इस आशय की सिफारिश की प्रतिध्वनि बैंकिंग पर्यवेक्षण के संबंध में बासेल समिति (बीसीबीएस) के 'प्रिंसिपल्स फॉर एनहांसिंग कारपोरेट गवर्नेंस' शीर्षक दस्तावेज में हुई है जो पिछले वर्ष जारी किया गया । मैं संक्षेप में इस दस्तावेज का उद्धरण देना चाहूँगा । इसमें कहा गया है कि 'युक्तियुक्त नियंत्रण और संतुलन का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अधिकाधिक संख्या में बैंकों को निदेशक मंडल का अध्यक्ष एक गैर-कार्यपालक को बनाये जाने की जरूरत है, सिवाय उन बैंकों के जहाँ विधि द्वारा अन्यथा अपेक्षित हो । जहाँ किसी बैंक में यह विलगाव नहीं हो और विशेष रूप से जहाँ निदेशक मंडल के अध्यक्ष और मुख्य कार्यपालक अधिकारी (सीइओ) की भूमिका एक ही व्यक्ति को निभानी हो वहाँ बैंक के लिए यह महत्वपूर्ण होता है कि वह ऐसे उपाय करे जिससे बैंक के नियंत्रण और संतुलन की स्थिति पर प्रभाव को कुछ कम किया जा सके (यथा, उदाहरण के लिए, एक अग्रणी बोर्ड सदस्य, वरिष्ठ स्वतंत्र बोर्ड सदस्य या तत्समान पद पर व्यक्ति को रखते हुए)।'

39. हमारे अपने सकारात्मक अनुभव और इस स्थिति के लिए वैश्विक अनुसमर्थन को देखते हुए प्रश्न यह है कि क्या हमें निदेशक मंडल के अध्यक्ष और सीइओ के पदों के पृथक्करण का यह सिद्धांत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तक भी विस्तारित करना चाहिए । इसका निश्चय करने के लिए एक महत्वपूर्ण मानदंड यह होगा कि हम किस हद तक किसी सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक के निदेशक मंडल के अध्यक्ष के पद के लिए सख्त पात्रता मानदंडों बना कर लागू कर पायेंगे । इस मुद्दे पर हम सरकार के साथ चर्चा करेंगे । इस बीच यह लाभप्रद होगा यदि इस मुद्दे पर कुछ चर्चा हो ।

वित्तीय नियंत्रक कंपनी संरचना के अंतर्गत कारपोरेट अभिशासन

40. जैसाकि हम सभी जानते हैं, भारत में वित्तीय निगमों के लिए प्रचलित मॉडल बैंक अनुषंगी मॉडल रहा है जो पूरी दुनिया में अधिक लोकप्रिय वित्तीय नियंत्रक कंपनी (एफएचसी) मॉडल के उलट है ।

41. बैंक अनुषंगी मॉडल की जोखिमें सर्वविदित हैं । पहली, बैंक के कारपोरेट प्रबंधन और भविष्य में इक्विटी में वृद्धि का बोझ बैंक पर पड़ेगा और इससे उसकी प्रबंधन की सक्षमता और वित्तीय क्षमता तनावग्रस्त होगी । दूसरी, विनियामक परिप्रेक्ष्य में एक चिंता यह है कि अनुषंगी कंपनियों की हानियाँ बैंक के तुलनपत्र को प्रभावित करेंगी और यहाँ तक कि बैंक के जमाकर्ताओं के हितों को भी खतरे में डालेगी । तीसरी, विशेष रूप से किसी बैंक की अव्यक्त आर्थिक सहायता तक पहुँच रक्षा कवच, जमा बीमा के जरिए होती है, उसकी पहुँच केंद्रीय बैंक की नकदी तक और भुगतान प्रणालियों तक होती है । बैंक अनुषंगी मॉडल में गैर-बैंक अनुषंगियों तक आर्थिक सहायता के रिसाव का अवसर उत्पन्न होता है जिससे नैतिक खतरे का मुद्दा उत्पन्न होता है । अंत में, यदि बैंक या उसकी कोई अनुषंगी संस्था विपत्ति-ग्रस्त होती है तो उसके समाधान की समस्या भी उठ खड़ी होगी ।

42. यह जानना दिलचस्प होगा कि हाल के वैश्विक वित्तीय संकट में वित्तीय कंपनी-समूह समान रूप से पीड़ित हुए भले ही उनकी संरचना किसी भी मॉडल के अंतर्गत की गयी हो । जबकि संकट-पश्चात् अवधि में किये गये सुधारों में किसी भी मॉडल को तरजीह नहीं दी गयी है, संरचना के संदर्भ में समेकित स्तर पर पूँजी-अपेक्षाओं को सुदृढ़ किये जाने, संरचना की जटिलता कम करने, ताकि किसी समस्या के उठने पर उसका दक्ष समाधान किया जा सके और निवेश बैंकिंग को वाणिज्यिक बैंकिंग से अलग करने पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

43. रिज़र्व बैंक द्वारा नियुक्त श्यामला गोपीनाथ कार्यदल ने सिफारिश की है कि वित्तीय नियंत्रक कंपनी मॉडल को भारत में वित्तीय क्षेत्र के लिए तरजीही मॉडल के रूप में काम करना चाहिए । हमें यह जान लेना चाहिए कि भले ही कारपोरेट संरचना कुछ भी हो, बैंकों को अपनी सम्बद्ध संस्थाओं के गैर बैंकिंग कार्यकलापों की जोखिमों से सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है । कोई ढाँचा जो उन्हें एफएचसी मॉडल के अंतर्गत सामंजस्यपूर्ण बना सके, उसके सिए नया विधान और नया विनियामक स्थापत्य अपेक्षित होगा ।

उपसंहार

44. अब मैं अपनी बात समाप्त करूँगा । मेरा प्रयास इस बात पर जोर देना रहा है कि किस प्रकार उत्पादकता उत्कर्ष का अनुसरण करने में उत्तम कारपोरेट संचालनएक महत्वपूर्ण तत्व होना चाहिए । मैंने इस बात पर प्रकाश डाला है कि किस प्रकार बैंक अन्य कारपोरेटों से भिन्न हैं और किस प्रकार यह बात उनके कारपोरेट संचालन पर वृहत्तर और अधिक जटिल जवाबदेही डालती है । मैंने वर्ष 1991 में किये गये सुधारों के पश्चात् भारतीय बैंकिंग संरचना में हुए परिवर्तनों को संक्षेप में बताने की चेष्टा की है । अंत में, मैंने पाँच क्षेत्रों में उपस्थित महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला है जिसमें बैंकों का कारपोरेट संचालनका मुद्दा शामिल है और उस पर हमें सामूहिक रूप से ध्यान देने की जरूरत है।

45. अपनी बात समाप्त करते हुए मैं अंतिम विचार प्रस्तुत करना चाहता हूँ । क्या कारपोरेट संचालन सामान्यतः और बैंकों का कारपोरेट संचालन विशेष रूप में केवल परिमेय निष्पादन संकेतकों से प्रेरित होना चाहिए या इसके लिए कुछ और भी है ? अपनी पांडित्यपूर्ण और अंतर्दृष्टिपूर्ण पुस्तक 'दि डिफिकल्टी ऑफ बिइंग गुड' में गुरुचरण दास ने हमारे महान महाकाव्य 'महाभारत' का उदाहरण देते हुए 'धर्म' की दुर्ग्राह्य धारणा की छानबीन की है ।

46. मेरा विश्वास है कि यह भाषण इस संदर्भ में प्रासंगिक है कि संकट की अवधि तक वित्तीय क्षेत्र में कारपोरेट संचालन की विफलता से 'धर्म' आहत हुआ । 'धर्म' को सोदाहरण उस समय समझाया गया है जब द्रौपदी अपने पति युधिष्ठिर को, जो जुए में अपना राज्य हार गये थे, प्रबोधन करते हुए कहती है कि वे सेना इकट्ठा करें और लड़कर अपना राज्य वापस लें । वह तर्क देते हुए कहती है 'भला होने में क्या रखा है?' 'क्या यह अच्छा नहीं होगा कि इस पक्षपाती दुनिया में जहाँ ठग रेशम की चादर पर सोते हैं और भले लोगों को कठोर धरती पर सोना पड़ता है, भला होने की बजाय शक्तिसंपन्न और धनी बन कर रहा जाये ? भला क्यों बनें ?' इस पर युदिष्ठिर एकमात्र तरीके से जिसे वे जानते हैं, उत्तर देते हैं 'मैं कर्म करता हूँ, क्योंकि मुझे कर्म करना चाहिए'। राजा का उत्तर 'धर्म' की अनम्य, अकाट्य आवाज का द्योतक है । नेतृत्व सब जगह लोगों को प्रेरणा देने वाला होता है । आप अनेक प्रकार से प्रेरणा दे सकते हैं -ऊर्जा, उत्साह, तत्परता, बुद्धिमत्ता और दृढ़ निश्चय के माध्यम से । लेकिन सर्वाधिक स्थायी प्रेरणा 'धर्म' के माध्यम से होती है । जब युधिष्ठिर द्रौपदी से कहते हैं कि वे कर्म करते हैं क्योंकि उन्हें कर्म करना चाहिए, तब वे चरित्र के सार तत्व का प्रदर्शन करते होते हैं ।

47. मैं आशा करता हूँ कि 'धर्म' का यह आदर्श जो भारतीय परंपरा और संस्कृति का अंग रहा है, हमारे बैंकों के कारपोरेट संचालन का मार्गदर्शन करेगा और उसे ज्ञान प्रदान करेगा ।